बिहार: विकास के हाशिये पर खड़ा दलित

देस्वी

बिहार: विकास के हाशिये पर खड़ा दलित

पैरवी

बिहारः विकास के हाशिये पर खड़ा दलित
मार्च 2016

आलेखः दीनबंधु वत्स
संपादनः अजय के. झा

प्रकाशकः
पैरवी
जी-30, लाजपत नगर-3, नई दिल्ली-110024
फोनः 011-29841266, 65151897
ईमेलः pairvidelhi@rediffmail.com, pairvidelhi1@gmail.com
वैबसाइटः www.pairvi.org

सहयोगः MISEREOR

© प्रस्तुत आलेख अथवा इसके किसी अंश का जानकारी के प्रसार के उद्देश्य से उपयोग करने के लिए पाठक स्वतंत्र हैं। स्रोत का उल्लेख करेंगे तो प्रसन्नता होगी।

बिहार निरंतर आर्थिक प्रगति की राह पर है। वर्ष 2005–06 से 2014–15 के बीच राज्य की अर्थव्यवस्था का विकास 10.5 प्रतिशत की वार्षिक दर से हुआ। यह देश के सभी प्रमुख राज्यों के बीच लगभग सर्वाधिक है। राज्य में प्रति व्यक्ति विकास व्यय की वृद्धि दर 29.6 प्रतिशत रही, जबकि अन्य राज्यों में यह दर लगभग 18 प्रतिशत के आस-पास रही। सामाजिक सेवाओं में भी सरकार का व्यय बढ़ा है। वर्ष 2011–12 से 2014–15 के दौरान सामाजिक सेवाओं के मामले में प्रति व्यक्ति व्यय में लगभग दोगुनी वृद्धि हुई जो कि 1479 रुपये से बढ़कर 2849 हो गया। कुल खर्च के रूप में अगर देखें तो वर्ष 2014–15 के बीच सामाजिक सेवाओं पर कुल व्यय 31713 करोड़ था जबकि 2015–16 में बढ़कर 38084 करोड़ रुपये हुआ।(बिहार आर्थिक सर्वेक्षण 2015–16). लेकिन इसके बावजूद भी बिहार में दलितों की स्थिति में व्यापक सुधार नहीं हुआ है। महत्वपूर्ण बात यह है कि सरकार दलितों के विकास के लिए आवंटित धनराशि भी पूरी तरह खर्च नहीं कर पाती है। सरकार ने अनुसूचित जाति-जनजाति कल्याण विभाग के लिए वर्ष 2016–17 में 1628.64 करोड़ रुपये बजट में प्रस्तावित किए हैं। जिसमें योजना मद में 1413.05 करोड़ रुपये और गैर योजना मद में 2015.59 करोड़ रुपये शामिल हैं। जबकि अनुसूचित

बिहार के जिला जमुई की एक मुसहर बस्ती में दलित परिवार का मकान

जाति-जनजाति कल्याण विभाग का कुल बजट 2015–16 में 1789.39 करोड़ था। हालाँकि 2014–15 में 1181.12 करोड़ रुपये आवंटित किए गए थे। इनमें से 85 प्रतिशत का ही उपयोग हो पाया था। वहीं 2013–14 में आवंटित धनराशि का केवल 83 प्रतिशत हिस्सा का ही उपयोग हो सका है।
(बिहार बजट 2016–17)

अनुसूचित जाति-जनजाति कल्याण के लिए आवंटित धन और व्यय (करोड़ में)

मद	2013–14			2014–15			2015–16
	बजट	वास्तविक व्यय	प्रतिशत उपयोग	बजट	वास्तविक व्यय	प्रतिशत उपयोग	बजट
अजा एवं अजजा	1042.48	904.78	86.8	1124.46	9 366.09	85.9	1469.74
सचिवालय सेवाएं	3.10	2.44	78.7	3.26	3.02	92.7	3.78
पूंजीगत व्यय	57.10	13.67	23.9	50.40	34.21	67.9	291.87
सहकारी समितियों पर पूंजीगत परिव्यय	3.00	1.00	33.3	3.00	3	100.0	4.00
अन्य प्रशासनिक सेवाएं	–	–	–	–	–	–	20.00
योग	1105.68	921.89	83.4	1181.12	1006. 32	85.2	1789.39

स्रोतः अजा/अजजा कल्याण विभाग, बिहार सरकार

सरकार ने दलितों में भी सबसे गरीब समुदायों के लिए एक अलग से महादलित समुदाय बनाया, जिससे उनके विकास पर अधिक ध्यान दिया जा सके। हालांकि,

धीरे-धीरे इस समुदाय में दलितों की 22 में से 21 जातियां शामिल हो गईं। इनके विकास के लिए महादलित विकास मिशन की स्थापना की गई और अलग से धनराशि आवंटित की गई। लेकिन इसका भी आलम यह है कि आवंटित धनराशि भी पूरी तरह खर्च नहीं हो पा रही है। राज्य सरकार ने महादलितों के विकास एवं आर्थिक उन्नयन के लिए वर्ष 2007–08 में महादलित विकास मिशन की स्थापना की थी। इस मिशन की महादलित आवास भूमि योजना के अंतर्गत आवासहीन महादलित परिवार को तीन डिसिमल आवास योग्य भूमि उपलब्ध कराने का प्रावधान है, लेकिन अभी तक सभी भूमिहीन महादलितों को भूमि उपलब्ध नहीं हो पाई है। सरकार ने इस वर्ष 220 करोड़ रुपये की राशि महादलित विकास मिशन के लिए स्वीकृत की है। पिछले अनुभव यही बताते हैं कि इस योजना के अंतर्गत भी पूरी धनराशि खर्च नहीं हो पाती है।

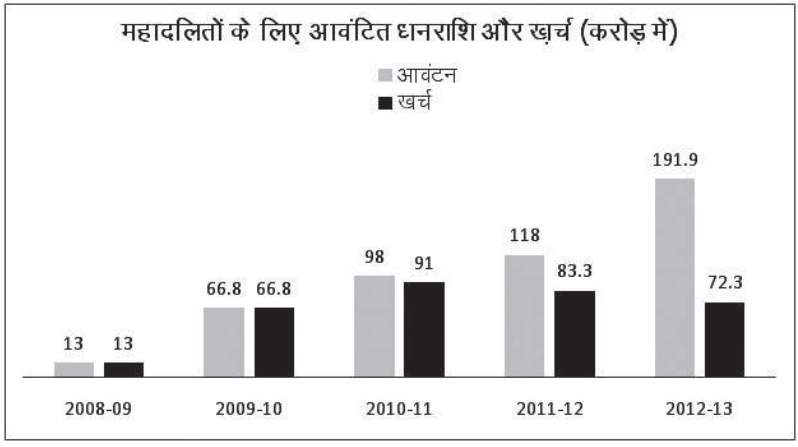

स्रोतः आर्थिक सर्वेक्षण 2013–14

बिहार में दलितों की आबादी लगभग 16 प्रतिशत है। भारत के सभी नागरिकों के लिए कानून के समक्ष समानता और मूलभूत मानवाधिकार और नागरिक अधिकार सुनिश्चित करने वाले संविधान को अपनाने के छः दशक से अधिक बीत जाने के बाद भी इनके प्रति भेद-भाव बदस्तूर जारी है। बिहार में दलितों

की सामाजिक और आर्थिक स्थिति आज भी चिंताजनक बनी हुई है। मूलभूत आवश्यकताओं के अभाव और सामाजिक भेदभाव का सबसे ज्यादा प्रभाव दलित महिलाओं और बच्चों पर होता है। सामाजिक-राजनैतिक अधिकारों का सबसे अधिक हनन भी इन्हीं का होता है। सरकार दलितों के कल्याण के नाम पर करोड़ों रुपये खर्च करती है। फिर भी विकास की मुख्य धारा से यह समुदाय वंचित है।

लगभग 80 प्रतिशत दलित गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन कर रहे हैं। इनमें लगभग 91 प्रतिशत दलित भूमिहीन हैं। भूमिहीनता से गरीबी की समस्या बढ़ती है और विकास की दर भी घटती है। बिहार में 91 प्रतिशत किसान सीमांत किसान हैं, जिनके पास एक हेक्टेयर से कम की जोत है और दलित किसानों के पास भूमि का अवदान और भी कम है। बिहार में एक भी दलित किसान बड़ी जोत वाला नहीं है। हालाँकि सरकार का दावा है कि लगभग 96 प्रतिशत आवासहीन दलितों को भूमि उपलब्ध करा दी गई है। दलितों की लगभग 80

बिहार के जिला जमुई के गाँव टहंवा में भोजन की अनुपलब्धता व भूख का शिकार भारो पंडित

प्रतिशत आबादी मात्र 4 प्रतिशत भूमिजोत पर आश्रित है। 2.43 लाख लक्षित परिवारों में से 2.34 लाख परिवारों को ही आवास योग्य भूमि आवंटित की गई है। इसमें भी अधिकांश लोगों का जमीन पर कब्जा ही नहीं हो पाया है। जीवन-यापन के लिए यह लोग मजदूरी पर ही निर्भर हैं। लगभग तीन चौथाई घरों में स्वच्छ पेयजल की सुविधा नहीं है। इसके अलावा आधे से अधिक दलित एक कमरे के घर में रहते हैं, जिनमें लगभग सात प्रतिशत लोगों के पास ही ईंट का पक्का मकान है। अधिकांश घरों में बिजली नहीं है। जनगणना 2011 के अनुसार 10 प्रतिशत से भी कम घरों में बिजली की सुविधा उपलब्ध है। ग्रामीण इलाकों में स्थिति और भी दयनीय है, जहां मात्र 6 प्रतिशत घरों में ही बिजली पहुँच रही है। स्वास्थ्य सुविधाओं और पहुँच का घोर अभाव है। दलित समुदाय में शिक्षा का स्तर भी सबसे कम है। मुसहर समुदाय में साक्षरता 6 प्रतिशत के करीब है।

इस समुदाय के लोग आज भी मैला ढोने का काम कर रहे हैं। सामाजिक, आर्थिक और जातिगत जनगणना 2011 के अनुसार राज्य में अभी भी 7268 लोग सिर पर मैला ढोने का काम कर रहे हैं, जिनमें मात्र 137 लोगों की पहचान हुई है और उनमें से अब तक 131 लोगों को सहायता के नाम मात्र 40 हजार रुपये एकमुश्त दिया गया है। अभी तक किसी को स्वरोजगार परियोजना के तहत काम उपलब्ध नहीं कराया जा सका है। तमाम प्रयासों के बावजूद भी इस अमानवीय कार्य से मुक्ति नहीं मिल पाई है। सर पर मैला ढोने वालों में सबसे अधिक महिलाएं हैं, जिनका सामाजिक राजनैतिक भेदभाव के कारण जीवन कठिन हो गया है।

दलितों की सामाजिक स्थिति

क्र.स.	स्थिति	प्रतिशत
1	एक कमरे में रहनेवाले परिवार	54
2	घरों में शुद्ध पेयजल की उपलब्धता	30
3	घरों में बिजली की उपलब्धता	10
4	घरों में शौचालय	10

स्रोतः जनगणना 2011

बदस्तूर जारी है हिंसा

पिछले कुछ सालों में राष्ट्रीय स्तर पर दलितों के प्रति हिंसा में लगातार वृद्धि हुई है। राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो के आंकड़ों के अनुसार 2014 में दलितों के खिलाफ 47,064 मामले दर्ज हुए, जबकि 2013 में 39,408 और 2012 में 33,655 मामले ही दर्ज हुए थे। 2013 से 2014 के बीच अपराध में 19 प्रतिशत की बढ़ोत्तरी हुई है। 2014 में अपराध का दर 23.4 रहा जो 2013 में 19.57 प्रतिशत था। आंकड़ों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि देश में दलितों को विकास की मुख्यधारा में शामिल करने के लिए उनके प्रति हो रही हिंसा को रोकना होगा। एनसीआरबी के 2014 के आंकड़ों के अनुसार दलितों के खिलाफ अपराधों में आरोप पत्र दाखिल करने की दर 92.3 प्रतिशत है और सजा की दर केवल 28.8 प्रतिशत है। यानि अधिकतर मामलों में आरोप पत्र दाखिल तो होता है लेकिन आरोपियों को सजा नहीं मिलती।

दलितों के प्रति हिंसा के मामले में बिहार देश के अग्रणी राज्यों में है। दलितों के प्रति अपराध की संख्या के हिसाब से देखें तो उत्तर प्रदेश और राजस्थान के बाद बिहार तीसरा सबसे बड़ा राज्य है। बिहार में 2014 में 7893 मामले दर्ज किए गए जबकि उत्तर प्रदेश में यह आंकड़ा 8075 और राजस्थान में 8028 था। अपराध दर के हिसाब से बिहार देश का चौथा सबसे बड़ा राज्य है। यहां दलितों के प्रति अपराध दर 47.6 प्रतिशत है, जबकि राजस्थान में 65.7 प्रतिशत और गोवा में 47.15 प्रतिशत है। महत्वपूर्ण बात यह है कि यह सरकारी आंकड़े हैं। कई ऐसे मामले हैं जो कि प्रकाश में आते ही नहीं हैं और उनकी एफआईआर दर्ज ही नहीं हो पाती।

अगर हम अनुसूचित जाति/जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम की बात करें तो सरकारी आंकड़ों के मुताबिक वर्ष 2014 तक 47,124 मामले दर्ज हुए इसमें 40,300 मामले अनुसूचित जाति और 6,820 मामले अनुसूचित जनजाति से संबंधित हैं। इसमें 8,415 मामले राजस्थान में, 8,090 उत्तर प्रदेश में और 7,951

मामले बिहार में दर्ज हुए हैं। हालांकि वर्ष 2013 में इस कानून के तहत कुल 46,114 मामले दर्ज हुए थे, जिसमें 39,346 मामले अनुसूचित जाति और 6,768 मामले अनुसूचित जनजाति से संबंधित थे। (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय).

दलितों के प्रति अत्याचार की ऐसी अनगिनत खबरें हैं जिनमें से कुछ प्रकाश में आई और कुछ दब गईं। आश्चर्य की बात यह है कि जो खबर सामने आती भी है उन सभी मामलों में एफआईआर दर्ज नहीं हो पाती। दलित और कानून (गिरीश अग्रवाल और कॉलिन गोन्साल्विस) के अनुसार 'एक ओर अत्याचार होने या अस्पृश्यता का व्यवहार होने पर प्राथमिकी (एफआईआर) दर्ज कराना कानूनी प्रक्रिया प्रारंभ करने के लिए आवश्यक कदम है, वहीं दूसरी ओर यही प्राथमिकी दलितों को कानून की सहायता लेने से रोकने के लिए पुलिस का मूल उपकरण बन जाती है। दलितों की शिकायतों को एफआईआर के रूप में दर्ज न करके या कानून की गलत धाराओं में दर्ज करके या अनुसूचित जाति-जनजाति अधिनियम के प्रावधानों को शामिल न करके पुलिस कानून और व्यवस्था के अपने आधिकारिक कर्तव्य के साथ ही कानून के पालन में भी असफल रहती है।' दलित चेतना की जागृति के बीच दलितों के प्रति हिंसा के आंकड़े भी बढ़े हैं। एक ओर आर्थिक प्रगति और विकास के दावे किए जाते हैं वहीं दूसरी ओर दलितों के प्रति हिंसा का ग्राफ नीचे नहीं आ पा रहा है, बल्कि हिंसा का स्वरूप और अधिक विकृत व बर्बर होता जा रहा है। हर 18 मिनट पर एक दलित के खिलाफ अपराध घटित होता है, रोज औसतन तीन महिलाएं बलात्कार का शिकार होती हैं, दो दलित मारे जाते हैं और दो दलितों का घर जला दिया जाता है। (राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, रिपोर्ट 2010).

पीड़ितों को न्याय दिलाने की दिशा में सबसे बड़ा अवरोध उनके मामलों की जांच-पड़ताल और आरोप पत्र तय करते समय नजर आती है। ज्यादातर मामलों में जांच-पड़ताल नहीं की जाती है, और साक्ष्य के अभाव में गंभीर किस्म के अपराधों के बावजूद न तो सुनवाई हो पाती है और न ही कोई कार्रवाई होती है। अक्सर अपराधी छूट जाते हैं।

अधिनियम में संशोधन

अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति अधिनियम 1989 को और अधिक प्रभावी बनाने के लिए अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) संशोधन विधेयक 2015 बनाया गया जो पहले लोक सभा और फिर राज्य सभा से पारित हो चुका है। 31 दिसंबर 2015 को इस बिल को राष्ट्रपति की मंजूरी भी मिली थी जिसके बाद 1 जनवरी 2016 को इसे अधिसूचित कर दिया गया। हालाँकि, इस नए अधिनियम को अस्तित्व में आने में 25 दिन लग गए। पुराने नियमों को बदलकर संशोधित नियमों में सरकार को सक्षम होने के लिए 25 दिन लगे और 26 जनवरी 2016 को यह अधिनियम पूरी तरह से लागू हो पाया है। इन पच्चीस दिनों में दलितों के खिलाफ कई अपराध हुए और ऐसे मामले हुए जिसमें नए अधिनियम के लागू न होने का हर्जाना भुगतना पड़ा। इनमें से प्रमुख था रोहित वेमुला की आत्महत्या का मामला। रोहित ने आत्महत्या क्यों की और उसके अपराधी कौन हैं इस बात पर जाँच चल रही है। लेकिन महत्वपूर्ण बात यह है कि नया विधेयक 2015, 26 जनवरी से लागू हुआ है और यह मामला 17 जनवरी का है, यानि रोहित के मामले में भी केस पुराने अधिनियम के तहत ही दर्ज हुआ। इस मामले के आरोपी अभी तक गिरफ्तार नहीं हुए हैं और यह कोई ताज्जुब की बात नहीं है। घटना के बाद आरोपियों के खिलाफ कार्रवाई में पुलिस की विफलता पुराने अधिनियम की एक बड़ी कमजोरी थी। अधिकतर पीड़ितों और गवाहों को कानूनी प्रक्रिया के हर चरण में बाधाओं का सामना करना पड़ता था। मामलों का पंजीकरण न होना, जाँच, गिरफ्तारी और आरोप पत्र दाखिल करने में देरी और सजा दर में कमी पुराने अधिनियम की कुछ मुख्य बाधाएं थीं।

संशोधित अधिनियम में विशेष सरकारी वकीलों और विशेष अदालतों की स्थापना के लिए कहा गया है जिससे मामलों का शीघ्र निपटारा हो सके। विशेष अदालतों को अपराधों का संज्ञान लेने और आरोप पत्र दाखिल करने

की तारीख से दो महीने के भीतर ट्रायल पूरा करने का अधिकार है। इन विशेष अदालतों का गठन जिला स्तर पर किया जाएगा। इसके फैसले को उच्च न्यायालय में चुनौती दी जा सकती है जिसकी सुनवाई भी दो महीने के अंदर कर लेनी होगी। पुलिस को केस दर्ज होने के 60 दिनों के अंदर चार्जशीट दाखिल करनी होगी, देरी होने पर जाँच अधिकारियों को लिखित रूप से देरी के कारण का जवाब देना होगा।

संशोधित अधिनियम में 'पीड़ितों और गवाहों के अधिकारों' पर भी एक अध्याय है जिसमें यह राज्य का कर्तव्य और जिम्मेदारी है कि वह पीड़ितों, उनके आश्रितों और गवाहों को किसी भी तरह की हिंसा, धमकी, प्रलोभन आदि से सुरक्षा दे। संशोधित अधिनियम ने पीड़ितों और उनके आश्रितों को जमानत की कार्यवाही सहित अदालत की कार्यवाही की उचित और समय पर जानकारी का पूरा अधिकार दिया है और विशेष सरकारी वकील और राज्य सरकार इन सभी कार्यवाही की जानकारी देने के लिए बाध्य हैं। अदालतों की कार्यवाही में पीड़ितों को भी अपनी बात रखने का अधिकार दिया गया है।

संशोधित अधिनियम में पुराने अधिनियम की धारा 3 में संशोधन करते हुए कुछ नए अपराध भी जोड़े गए हैं, जैसे- किसी भी अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों को अस्पताल, शैक्षिक संस्थान, प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र या अन्य किसी सार्वजनिक जगह पर जाने से रोकना, सार्वजनिक उपयोग के लिए रखे बर्तनों का उपयोग न करने देना, लिखित व बोले गए शब्दों द्वारा अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों के प्रति घृणा या दुर्भावना को बढ़ावा देना और अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों को बहिष्कार की धमकी देना, सिंचाई के साधन का उपयोग करने से रोकना, वनाधिकार को रोकना, सामाजिक व आर्थिक रूप से बहिष्कृत करना, चुनाव में भाग लेने से रोकना, घर/गाँव के बाहर रहने पर मजबूर करना, महिलाओं के प्रति लिंगभेदी शब्दों का प्रयोग करना, उन्हें घूरना और पीछा करना सहित कई अपराध शामिल किए गए हैं। ऐसी कोई

भी गतिविधि जो दलित की गरिमा के खिलाफ और अपमानजनक हो, जैसे- सिर या मूँछ मुंडवाना, जूते/चप्पल की माला पहिनाना, दलित महिलाओं को मंदिरों में देवदासी बनाना या इसी तरह की अन्य गतिविधि आदि को नए कानून में अपराध की श्रेणी में शामिल किया गया है। गैंगरेप, हत्या और एसिड अटैक के शिकार दलित समुदाय के लोगों को 8.5 लाख रुपये के मुआवजे का प्रावधान है। वहीं बलात्कार की शिकार महिला को 5 लाख रुपये के मुआवजे का प्रावधान है। पुराने कानून में 22 ऐसे अपराधों की सूची थी जिनमें 60 हजार से लेकर 5 लाख रुपये के मुआवजे का प्रावधान था, जबकि नए कानून में 47 अपराधों की सूची है जिनमें एक लाख रुपये से 8-5 लाख रुपये के मुआवजे का प्रावधान है।

पहले इस कानून में भारतीय दण्ड संहिता की उन्हीं धाराओं को शामिल किया गया था जिनमें 10 वर्ष या उससे अधिक की सजा का प्रावधान था, लेकिन नए संशोधन में ऐसे अपराधों को भी शामिल किया गया है जिनमें 10 वर्ष से कम की सजा का प्रावधान है, जैसे- गंभीर रूप से चोट पहुंचाना, अपहरण आदि।

***